(RNI No. DELHIN/2010/31533)

कृष्णा-मोहन गायत्री संस्थान की पत्रिका

गायत्री माँ

वर्ष : 8 । अंक : 12 । आषाढ़, विक्रमी संवत् 2072 जुलाई, 2015

आर्य माँ कृष्णा रहेजा जी

स्वर्गीय श्री महेश्वरनाथ रहेजा

कृष्णा-महेश गायत्री संस्थान की पत्रिका

गायत्री माँ

मूल्य : 16 रुपये | वर्ष : 8 | अंक: 12 | आषाढ़, विक्रमी संवत् 2072 जुलाई, 2015

कृष्णा-महेश गायत्री संस्थान (रजि.)

संस्थापक

श्रीमती स्व. माता कृष्णा जी रहेजा

व्यवस्थापक

समस्त रहेजा परिवार

कार्यालय

डब्ल्यू 22 ए-2, वेस्टर्न एवेन्यू,
सैनिक फार्म, नई दिल्ली-110062

फोन

9958692615, 9811398994

प्रेरणा स्त्रोत

परिवार प्रमुख श्री महेश्वरनाथ रहेजा

संपादक

प्राचार्य महावीर शास्त्री

मुद्रक

मयंक प्रिन्टर्स
2199/64, नाईवाला, करोल बाग,
नई दिल्ली-110005
दूरभाष : 9810580474

विषय-सूची

सम्पादकीय	– प्राचार्य महावीर शास्त्री	२
वैदिक विनय	– आचार्य अभयदेव	३
महर्षि दयानन्द सरस्वती	– जय सिंह आर्य	४
देव दयानन्द जी के संग	– डॉ० महेश जी	५
मानसिक अवसाद	– वीरेन्द्र कुमार शास्त्री	८
नाम का क्या काम	– शशी सौरभ	१०
योगमय जीवन	– श्रीमती प्रेमचन्द्रिका	१२
क्षमाशीलता	– कृष्णा गर्ग, बरेली	१३
वास्तविक्ता	– सुभाषचंद्र शर्मा	१५
चाणक्यनीति	– प्राचार्य महावीर शास्त्री	१६
गृहस्थ के सूत्रधार	– स्वामी दीक्षानन्द सरस्वती	१८
भारत के महान वैज्ञानिक	– दीना नाथ बत्रा	२१
अन्तर की चाह	– प्रताप कुमार 'साधक'	२२
आया एक योगी	– प्राचार्य महावीर शास्त्री	२३
छात्र विवरण	– प्राचार्य महावीर शास्त्री	२४
बच्चों का पन्ना	– प्राचार्य महावीर शास्त्री	२५

गायत्री माँ में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण सम्बन्धित लेखक के हैं। सम्पादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

सम्पादकीय

प्राचार्य महावीर शास्त्री

विश्व में चहुँ ओर छल–कपट, लूटमार का दौर चल रहा है। मन्त्री–सन्तरी सभी जन इस लूट–खसोट में पीछे नहीं है। सच्ची देशभक्ति नहीं है। चोर–चोर मौसेरे भाई वाली बात सर्वत्र दृष्टिगोचर है। सच्चे भक्त अब क्यों शहीद होंगे जबकि भारत के मणिशंकर अय्यर जैसे केन्द्रीय मन्त्री एक बार अण्डमान–निकोबार गए और वहाँ जेल की कालकोठरी, जिस पर वीर सावरकर का नाम लिखा था वह भी वहाँ से हटवा दिया और इस महान देशभक्त, लेखक, चिन्तक, सर्वोच्च स्वतन्त्रता सेनानी जो तेल के कोल्हू में बैल की तरह जुतकर अंग्रेजों की बुद्धि का दिवाला निकाल रहे थे उनके द्वारा कुछ उकेरे गए शब्दों को भी मिटवा दिया, ऐसे थे ये केन्द्रीय मन्त्री।

विश्व में न्यायपालिका कभी भी एक अपराध के लिये दो–दो बार आजन्म की कैद की सजा नहीं सुनाती, यहीं अंग्रेजों का दिवालियापन प्रतीत होता है। किन्तु हमारे कुछ चाटुकार नेता अपने को आदर्श समझते हुए देश के शहीदों व देशभक्तों को स्मरण तक नहीं करना चाहते तो फिर अब शहीद कौन होगा।

हमारी भारतीय सेना शत्रु को नाकों चने चबाते हुए अपने प्राणों की आहुति देती है। उस पर भी एक मन्त्री ने बहुत मर्मान्तक शब्द अपने मुख से कहे कि सैनिक तो भर्ती ही मरने के लिए होते हैं। अत आज हमारे देश की सीमाओं पर शत्रुओं की गिद्धदृष्टि लगी है। अतः सच्चे भारतीय बनकर नेतृत्व करें तथा सदैव देशभक्तों और शहीदों को नमन करें।

हम सदैव राजगुरू, सुखदेव, भगत सिंह, चन्द्रशेखर आजाद, अशफाक, सुभाष चन्द्र बोस व रासबिहारी बोस के क्रान्तिकारी संघर्ष को पुनः स्मरण करें।

हम भारतीयों का परम कर्त्तव्य है कि हम सभी आदर्श व्यक्तित्व व चरित्रवान बने और भारतीय भाषाओं को बोलकर गर्व अनुभव करें। अंग्रेज लार्ड मैकाले, जो देश को दे गया उसको भूले तथा संस्कृत भाषा जो सभी भारतीय भाषाओं की जननी है, उसका देश में प्रचार करें, पढ़ें और पढ़ावें तभी देशोद्धार होगा।

वैदिक विनय

–आचार्य अभयदेव विद्यालंकार

अभ्रात्व्यो अना त्वं अनापिः इन्द्र जनुषा सनादसि। युधेदापित्वमिच्छसे।।
-ऋ० ८।२१।१३, अथर्व० २०।११४।१

ऋषिः काण्वः सोभरिः। देवता इन्द्रः। छन्दः निचृद् उष्णिक्।

विनय– हे परमेश्वर ! तुम्हारे लिए न कोई शत्रु है और न ही कोई बन्धु है। तुम जिस उच्च स्वरूप में रहते हो वहाँ शत्रुता और बन्धुता का कुछ अर्थ ही नहीं, और तुम्हारे लिए कोई नायक व नियन्ता कैसे हो सकता है ? तुम ही एकमात्र सब जगत् के नियन्ता हो, नेता हो। तुम जन्म से, स्वभाव से ही ऐसे हो। 'जनुषा' का यह मतलब नहीं कि तुम्हारा कभी जन्म होता है। तुम तो सनातन हो, सनातन रूप से ही शत्रुरहित और बन्धुरहित हो। पर निर्लिप्त होते हो, युद्ध द्वारा ही चाहते हो। अहा ! कैसा सुन्दर आयोजन है ! तुम चाहते हो कि संसार के सब प्राणी सांसारिक युद्ध करके ही एक दिन तुम्हारे बन्धु बन जायें, तुम्हारे बन्धुत्व का साक्षात्कार कर लें। सचमुच बिना लड़ाई के मिली सुलह, बिना संघर्ष के मिली प्रीति, बिना संग्राम के मिली मैत्री नीरस है, फीकी है, अवास्तविक है, उसका कुछ मूल्य नहीं है। बन्धुता तो अबन्धुता की, लड़ाई की, सापेक्षता में ही अनुभूत की जा सकती है। इसीलिए हे मेरे जगदीश्वर ! मुझे अब समझ में आता है कि तुमने कल्याणस्वरूप होते हुए भी इस अपने जगत् में दुःख, दर्द, दारिद्रय, रोग, क्लेश, आपत्ति, उलझन आदि को क्यों उत्पन्न होने दिया है और अब समझ में आता है कि तुमने इन कठिनाइयों को खड़ा करके प्राणियों के जीवन को निरन्तर युद्धमय, संघर्षमय क्यों बनाया है। सचमुच, यह सब कुछ तुमने इसीलिए किया है कि हम इन बाधाओं को जीतकर, इन कठिनाइयों, उलझनों को पार करके तेरे बन्धुत्व के रसास्वादन के योग्य बन जायें। तू तो अब भी हमारा बन्धु है। हममें से जो तेरे द्रोही कहे जाते हैं–जो नास्तिक हैं–उनका भी तू सदैव एक–समान बन्धु है (और असल में किसी का भी बन्धु या शत्रु नहीं है) तो भी तेरी उस बन्धुता का अनुभव–तुझे बन्धु रूप से पा लेने का परमानन्द – हमें तभी मिल सकता है जब हम संसार के इस परम विकट युद्ध को विजय करके तेरे पास आ पहुँचें। तू चाहता है कि आज जो तुझसे बहुत दूर है, तेरा कट्टर बन्धु बन जाये। अतः अब मैं तेरे बन्धुत्व पाने के समर में ही कमर कसे खड़ा हुआ अपने को पाता हूँ, जितनी बार मरूँगा इसी समर की युद्धभूमि में ही मरूँगा और अन्त में तेरे बन्धुत्व को पाकर ही दम लूँगा। यही तेरी इच्छा है, यही तेरी मुझसे प्रेममय इच्छा है।

शब्दार्थ- इन्द्र हे परमेश्वर ! **त्वं** तुम **जनुषा** जन्म से ही, स्वभाव से ही **अभ्रात्व्यः** शत्रुरहित **अनापिः** बन्धु–रहित **अना** नियन्तृ–रहित **असि** हो, **सनात्** तुम सनातन हो, सनातन से ही ऐसे हो। पर तुम **युधा** युद्ध द्वारा **इत्** ही **आपित्वं** बन्धुत्व को **इच्छसे** चाहते हो।

महर्षि दयानन्द सरस्वती

हंसते हंसते खेल गये जो प्राणों पर
उन वीरों की कुर्बानी के गीत कहें
जिसने आजादी का शंख बजाया
उस स्वामी दयानन्द को याद को याद करें।
आजादी का दिनकर बनकर उभरा जो
उस मंगल पांडे को शत बार नम
भगत सिंह, सुखदेव, राजगुरू जैसे ने
आजादी खातिर जीवन को किया हवन,
प्राण हथेली पर रखने वाले न्यारे,
आजादी के सेनानी वो गीत कहें
हंसते–हंसते....।
आजादी का दीवाना आजाद हुआ
इसके चर्चे हैं जन–गण–मनं में अंब तक
रोशन उसका नाम रहेगा दुनियां में
सूरज चंदा चमकेंगे नभ पर जब तक
जिस धरती पर पैदा ऐसे वीर हुए,
उस धरती माटी के गीत कहें ।
हंसते–हंसते....।
दुश्मन के घर में घुसकर आंधी बनकर
जिसने अपना साहस कौशल दर्शाया
दूध छठी का याद दिलाया दुश्मन को
वह उधम था भारत भाता का जाया
वह हमीद था भारत भाता का जाया
जिसकी कुर्बानी ने एक इतिहास रचा
आओ ऐसे बलिदानी के गीत गहें
जिसने आजादी का शंख बजाया
उस स्वामी दयानन्द को याद करें।

जय सिंह आर्य

देव दयानन्द जी के संग

–डॉ० महेश कुमार शर्मा

महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती जी बड़े विनोदप्रिय थे। उनमें यह शक्ति थी कि श्रोताओं को जब चाहे हंसा दें और जब चाहे रुला दें। जब वे देखते कि श्रोता गम्भीर विषयों को सुनते–सुनते कुछ अन्मयस्क हो गये हैं तो कोई कथानक या चुटकुला ऐसा सुना देते थे कि श्रोता खिलखिलाकर हंस पड़ते थे और फिर गम्भीर विषयों की ओर आकृष्ट हो जाते थे।

वर्ष १८८०, काशी नगर का दृष्टान्त है। महर्षि दयानन्द जी बाबा जी शब्द के अर्थ किया करते थे। 'वा' (विकल्पे), वाजी–अश्व या अश्वतर। एक बुढ़िया स्त्री उनके घर बर्तन मांजने आया करती थी। वह जब अपने कार्य से निपटकर जाया करती थी तो यह कहकर जाया करती थी बाबा जी मैं जाती हूँ। एक दिन महर्षि ने उससे कहा कि तू मुझे बाबाजी मत कहा कर। उसने कहा कि और क्या कहूँ ? महाराज जी ने कहा कि स्वामी जी कहा कर। बुढ़िया बोली कि यह बात मुझे याद कैसे रहेगी ? बाबाजी कहने में क्या बुराई है ? तो महाराज जी ने कहा कि इस शब्द के अर्थ है, घोड़ा नहीं तो खच्चर।

एक दिन एक व्यक्ति जो भांग बहुत पिया करता था, स्वामी दयानन्द जी की सेवा में उपस्थित हुआ और उसने प्रश्न किया कि चित्त किस प्रकार एकाग्र हो सकता है ? महाराज जी ने किंचित मुस्कुराहट के साथ उत्तर दिया कि भांग पीने से। वह इसे सुनकर विस्मित भी हुआ और लज्जित भी। स्वामी जी को उसके दुर्व्यसन का ज्ञान नहीं था।

२१ जनवरी, सन् १८७५ को महर्षि देव दयानन्द जी ने राजकोट में अहमदाबाद में कर्म विषय पर एक अति मनोहारी वक्तृता दी। इसमें उन्होंने बताया कि वही लोग अपने कार्यों में सफल होते हैं जिनका एक अनादि, अजर, अमर, निराकार ईश्वर में विश्वास होता है। वे अपने धर्म के विस्तार के उपायों को फैलाते हैं, उनके मन एक–दूसरे से मिल जाते हैं, आपस में प्रेम की वृद्धि होती है और धर्म का अभिमान आ जाता है। वे एक–दूसरे की प्रत्येक सम्भव उपाय से सहायता करते हैं। जब हमारे सब आर्य लोग वेद को सर्वोपरि और प्रामाणिक समझकर चलेंगे और हमारे मन मिल जायेंगे तो हम सारे संसार को वेद मंत्रों के नाद से निनादित कर देंगे।

ग्वालियर के महाराजा ने जब स्वामी दयानन्द जी से पूछा कि भागवत कथा का क्या महात्मय है ? तो उत्तर में महर्षि ने कहा कि क्लेश के अतिरिक्त और कुछ नहीं। महाराजा ने इसके उपरान्त भी कथा करवाई। किन्तु उनकी राजधानी में विषूचिका (हैजा) का प्रकोप हुआ, महारानी का गर्भपात हो गया और कुछ समय पश्चात् युवराज की भी मृत्यु हो गई। यह सब संयोगमात्र ही था लेकिन स्वामी जी का कथन सत्य निकला।

वर्ष १८६६ में फर्रूखाबाद में अपने प्रवास के दौरान महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ने मनुष्य के कर्त्तव्य के बारे में बताते हुए कहा था कि मनुष्य का कर्त्तव्य ईश्वर–प्राप्ति है, जो ईश्वरीय आज्ञाओं

के पालन अर्थात् वेदानुकूल आचरण, मनूक्त धर्म के दसवें लक्षणों पर चलने और अधर्म त्याग से हो सकती है। यह पूछने पर कि मनुष्य को क्या करना चाहिए ? तो उन्होंने उत्तर दिया कि जैसे ईश्वर दयालु है वैसे मनुष्य को सब पर दया करनी चाहिए और जैसे ईश्वर सत्य है वैसे मनुष्य को भी सत्य मानना, सत्य बोलना और सत्य ही करना चाहिए। उन्होंने आगे कहा कि मानव के लिये दया से बढ़कर कोई धर्म नहीं, क्षमा से बढ़कर कोई कर्म नहीं और सेवा से बढ़कर और कोई पूजा नहीं।

वर्ष १८७५ में बड़ौदा में एक दिन स्वामी दयानन्द जी क्षौर (मुण्डन) करा रहे थे। एक पण्डित ने आकर कहा कि सन्यासियों का धर्म तो त्याग है, आप देह–विभूषा में क्यों लगे हैं ? स्वामी जी ने हंसते हुए उत्तर दिया कि यदि बढ़ाने में ही त्याग है तो रीछ सबसे बड़ा त्यागी है। यह कहकर उसे उपदेश दिया कि देह की रक्षा के लिये उसे संवारना पाप नहीं है। जो मनुष्य परोपकारी है, उन्हें अपनी देह की रक्षा करना आवश्यक है, जिससे वे उपकार कार्य अच्छी प्रकार कर सकें। एक बार सन् १८७७ में आर्य समाज लाहौर अधिवेशन में सभासदों ने यह प्रस्ताव किया कि महर्षि स्वामी दयानन्द महाराज जी को आर्य समाज लाहौर के संरक्षक या अधिनायक की पदवी दी जाए परन्तु महाराज ने उसे अस्वीकार किया और कहा कि इसमें गुरुपन की गन्ध आती है और मेरा उद्देश्य ही गुरुपन को तोड़ने का है, न कि स्वयं गुरु बनकर एक नया पन्थ स्थापित करने का। यदि कल को इस पदवी से मेरा ही मस्तिष्क फिर जाए अथवा ऐसा न हो और मेरा स्थानापन्न घमण्ड में आकर कोई अन्यथा कार्य करने लगे तो तुम लोगों को बड़ी कठिनता होगी और वही दोष उत्पन्न हो जायेंगे जो दूसरे अन्य पंथों में हो गये हैं।

इसके पश्चात् यह प्रस्ताव हुआ कि स्वामी दयानन्द जी को आर्यसमाज लाहौर के परम सहायक की पदवी दी जाये। इसे भी देव दयानन्द जी ने अस्वीकार कद दिया और कहा कि यदि मुझे परम सहायक मानोगे तो उस जगदीश, जगद्गुरु, सर्वशक्तिमान को क्या मानोगे ? अन्त में सभासदों के विनम्र आग्रह पर स्वामी जी ने साधारण सहायक (सभासद) बनना स्वीकार किया और अन्य सभासदों की भांति उनका शुभ नाम भी सभासदों की सूची में अंकित किया गया। एक छोटी सी ज्ञान गोष्ठी में स्वामी दयानन्द सरस्वती जी के कुछ भक्त बैठे थे। उनमें से एक ने सकुचाते हुए कहा कि स्वामी जी जो कुछ मै। पूछना चाहता हूँ, वह आपके निजी जीवन से घष्टि सम्बन्ध रखता है, इसलिए पूछते हुए संकोच हो रहा है। स्वामी जी बोले कि आचार्य और शिष्य का संबंध आवरण रहित होता है। जानते नहीं, मशाल के साथ अंधेरा भी रहता ही है, भले ही मात्रा में नगण्य क्यों न हो। इसलिए निःसंकोच होकर पूछो।

तब उस महानुभाव ने पूछा कि महाराज, आपको क्या काम ने कभी नहीं सताया ? यह सुनकर स्वामी जी ने नेत्र मींच लिये और ध्यानमग्न से हो गये। फिर बोले कि प्रश्न सचमुच ही समझदारी का किया गया है। शिष्यों को गुरु से और गुरु को शिष्यों से कुछ भी छिपाकर नहीं रखना चाहिए, तभी तो शिष्य उच्च बन सकेंगे। अस्तु, काम मेरे समीप नहीं आया और न ही मैंने उसे देखा है। यदि जब–तब आया होगा तो मेरे मस्तिष्क और हृदय के द्वारों को देखकर, बाहर बैठे–बैठे उकता कर निराश हो लौट गया होगा। मेरे मस्तिष्क और हृदय को वेद–भाष्यादि के लेखन तथा

शास्त्रार्थों से अवकाश ही कहां मिलता है, जिससे मैं इस निम्न दैहिक स्तर पर आकर यहां के दृश्य देखूं, सुनूं और उन पर ध्यान दूं।

इतने में एक सज्जन ने पूछज्ञ कि महाराज, क्या आप स्वप्न में भी काम से पीड़ित नहीं हुए ? इस पर स्वामी दयानन्द जी ने मुस्कुराते हुए जवाब दिया कि भाई, जब काम को मैंने अंतर में प्रवेश करने के लिए द्वार ही नहीं दिखाई दिया, तब क्रीड़ा भी कैसे और किससे करता ? जहां तक मेरी स्मृति काम दे रही है, इस शरीर से शुक्र की एक बूंद भी बाहर नहीं गई है। यह सुनकर सब अवाक् रह गए। भला इतना उच्च जीवन कितने मानवों से सध सकेगा।

वेदवाणी

यो रायो वनिर्महान्त्सुपारः सुन्वतः सरवा।
तस्मा इन्द्राय गायत।। ऋक्० १-४-१०

किसी को भी परमेश्वर की केवल स्तुति मात्र से संतुष्ट न होकर, अपनी स्तुति के अनुरूप उद्योग करना चाहिए। उसकी सहायता चाहने वाले मनुष्य को यह जानकर कि वह सर्वव्यापक और सर्वदृष्टा है, अधर्म कार्यों का परित्याग कर देना चाहिए।

अपाङ् प्राङेति स्वधया गृभीतोऽमर्त्यो मर्त्येना सयोनिः।
ता शश्वत्ता विषूचिना वियन्तान्यन्यं चिक्युर्न नि चिक्युरन्यम्।। अथर्व० ६-१०-१६

जीवात्मा अपने कर्मानुसार ही शरीर तथा निम्नगति एवं उच्चगति को प्राप्त करता है। अन्तर्मुखी विद्वान योगी इस विषय को जानते हैं मूर्ख नहीं। अतः उत्तम गति पाने के लिए कर्म भी उत्तम करने चाहिए।

तपः श्रुतञ्च योनिश्चैतद् ब्राह्मण कारकम्।
तपः श्रुताभ्यां यो हीनो जाति ब्राह्मण एव सः।। महाभाष्य २-२-६

तपस्या, वेदाध्ययन तथा जन्म इन कारणों से ही कोई व्यक्ति ब्राह्मण कहाने योग्य है। तपस्या तथा वेदाध्ययन से रहित होने पर जो केवल जन्म से ही ब्राह्मण है वह तो मात्र नाम का ही ब्राह्मण है। अतः प्रत्येक ब्राह्मण का अवश्य कर्त्तव्य है कि वह तप तथा वेदाध्ययन अवश्य करे।

अञ्जनस्य क्षयं दृष्ट्वा वल्मीकस्य च सञ्चयम्।
अवन्ध्यं दिवसं कुर्याद दानध्ययनकर्मसु। महर्षि याज्ञवल्क्य

अञ्जन (काजल) का अति अल्प मात्रा में प्रयोग होने पर भी कालान्तर में पूरी डिबिया ही समाप्त हो जाती है, इस क्षय को और चींटी के एक–एक कण के सञ्चय से निर्मित वल्मीक (बामी) को देखकर अर्थात् इनसे प्रेरित होकर मनुष्य को दान, अध्ययन आदि शुभ कर्मों में प्रतिदिन प्रयत्नशील होना चाहिए।

मानसिक अवसाद

आज के भागदौड़ भरे जीवन में मानव मानसिक अवसाद से ग्रसित होते जाते हैं। जिससे भी पूछो वही यह कहते दिखाई देता है। भाई साहब बहुत टैंशन में हूं सभी प्रकार की सुख सामग्री होने पर भी मानव सुखी दिखाई नहीं देता, हसका एक ही कारण है हम नकारात्मक ही सोचते हैं सकारात्मक सोच से ही इस समस्या का निदान हो सकता है। हमारा जो मन है वह सकंल्प करने वाला है, उसके सकंल्प अच्छे भी होते हैं और बुरे भी, यह मन मनुष्य के बन्धन और मोक्ष का कारण है। शास्त्रकारों ने कहा है मनःपुण्याणांकारणं बन्धमोक्ष्योः इसलिए सभी अवसादों से बचने का एकमेव उपाय है चित्त (मन) की वृत्तियों को रोकना उन्हें सकारात्मक बनाना, इसलिए हमारे प्राचीन ऋषियों ने हमें प्रसन्न और सुखी रखने के लिए एक पद्धति दी जिसका नाम है योग या ध्यान, ध्यान के द्वारा ही हम अपनी अन्तःस चेतना को उन्नत व सकारात्मक बना सकते है और मानसिक अवसाद से बच सकते हैं। ध्यान क्या है? इस सम्बन्ध में महर्षि पतंजलि योग दर्शन में कहते हैं– ध्यान निर्विषयं मनः मन को विषयों से हटना, ये कैसे होगा, इसके बिना ज्ञान के ध्यान भी नहीं होता, हमें यह भी ज्ञान करना पड़ेगा कि सारे सुखों मूल एवं शांति का मूल परमेश्वर है, इसलिए उसी परमात्मा का ध्यान करना। वह परमात्मा सर्वव्यापक होने से बाहर व भीतर सब जगह है अतः ध्यान तो वही हो सकता है जहां ध्यान करने वाला जीवात्मा जिसके द्वारा ध्यान किया जा रहा है वह मन जिसका ध्यान किया जा रहा है वह परमात्मा तीनों एक स्थान पर हो तो मन और आत्मा तो भीतर है, परमात्मा भीतर भी है इसलिए ध्यान भीतर ही हो सकता है, बाहर के संसार में ध्यान नहीं हो सकता। कहा भी है –

शब्द सूरति लगायकै मुख से कछु न बोल।
बाहर के पट बन्द कर भीतर के पट खोल।।

आन्तरिक साधनों में ध्यान लगाना । ध्यान के लिए प्राणायाम आवश्यक है मानसिक रोगों में भी प्राणायाम का ही विशेष महत्व है । प्राणायाम के सम्बन्ध में महाराज मनु लिखते हैं, जैसे सब धातुओं के मल पानी द्वारा दूर हो जाते है वैसे प्राणायाम करने से इन्द्रियों के दोष दूर हो जाते हैं । इन्द्रियों को कारण भी कहा है ये दो प्रकार के है। अन्तःकरण और बाह्यकरण, पांच ज्ञानेन्द्रियां एवं पांच कर्मेन्द्रिया, बाह्यकरण एक दूसरा अन्तःकरण, मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार । प्राणायाम से ये शुद्ध होते है । मन के विषय धीरे– धीरे शांत होते चले जाते हें । और हमारा ध्यान लगने लगता है । इसलिए महर्षि दयानन्द सरस्वती ने सन्ध्या की विधि में लिखा है कि कम से कम तीन एवं अधिक से अथिकश प्राणायाम करें । प्राणायाम से प्राणः बढ़ता है । तो प्रातःकाल और सायंकाल दोनों समय बैठक हाथ पैर धोकर प्रातः स्नान कर ध्यान जरूर करें जैसे हम मोबाइल चलाते हैं तो मोबाइल चार्ज करना होता है । जैसे बैटरी चार्ज करके आपका मोबाइल दिन भर चलता है । इसी प्रकार से आत्मा रूपी बैटरी को चार्ज करने के लिए मन और बुद्धि क्रो चार्ज करने के लिए ध्यान की आवश्यकता है । जब आप प्रातः २० या ३० मिनट की ईश्वर के मुख्य नाम ओम का जाप करते हुए

ध्यान करेंगे तो आप दिन भर ऊर्जा से भरे रहेंगे और मानसिक अवसाद से दूर रहेंगे इसी प्रकार सायंकाल भी ध्यान करें इसके निरन्तर अभ्यास से आप तनावमुक्त होकर सुखी रहेंगे और परमात्मा में आपकी प्रीति बढ़ेगी । दूसरा आप विचार करें इस प्यारे प्रभु ने हमें कितनी सुन्दर इन्द्रियां दी है, हम अपनी वाणी के सम्बन्ध में विचार करें इस वाणी को परमात्मा ने हमें प्रदान किया है तो इसके द्वारा मधुर मीठा व सत्य बोल कानों से अच्छी कल्याणकारी बाते सुने, दूसरे की निन्दा, चुगली न करें न सुने सदा उत्तम चिन्तन करें और अपने जीवन में इन पांच चीजों को जरूर धारण करें–

१. सेवा– परिवार में समाज में सेवा का भाव रखें माता, पिता, आचार्य सास–स्वसूर आदि की सेवा करना अपना सौभाग्य समझें।

२. सत्संग– सत्संग कों वेद एवं वेदोक्त बातों को सुनें, चिन्तन कों और उत्तम विचारों क्रो धारण करें

३. स्वाध्याय– आपको जितना भी समय मिले आप ऋषियों, मुनियों के ग्रन्थों का स्वाध्याय अवश्य करें, जैसे सत्यार्थ प्रकाश, गीता, वेद, उपनिषद, दर्शनादि।

४. साधना– ईश्वर का ध्यान चिन्तन मनन ।

५. संस्कार– आप गृहस्थी हैं तो अपने सन्तानों को उत्तम संस्कार देकर राष्ट्र के अच्छे नागरिक बनाने में अपनी भूमिका निभायें।

इस प्रकार से आप अपने जीवन को सरल, सुन्दर, सरस एवं अवसाद रहित बनाकर अपना अपने परिवार एवं समाज का भला कर सकते हैं। ये कुछ बातें मैंने अपनी सेवा में प्रस्तुत की आशा है आप लाभान्वित होंगे

वीरेन्द्र कुमार शास्त्री
वैदिक प्रवक्ता, गांधीनगर कालॉनी, नवादा, सहारनपुर

नाम का क्या काम

– शशि सौरभ

इस भौतिक जगते में समस्त गोचर और अगोचर पदार्थ व तत्व अस्थाई और नष्ट होने वाली चीज़ है, फिर इसके लिए पाप कर्म करना कदापि उचित नहीं हो सकता है। यह भौतिक जगत माया का आवरण है, यहाँ सिर्फ माया और काया के लिए ही सार उद्योग व व्यापार होता है। स्त्री–पुत्र–धनप्रतिष्ठा मान और नाम यह सब माया है । इस संसार के सामान्य जीव (मानव) स्त्री–पुत्र व धन की माया में ही अपने जीवन की अमूल्य समय और ऊर्जा कोष नष्ट कर देते हैं । बाकी बचे कुछ विशेष मानव जो स्त्री–पुत्र व धन की माया से भी बच जाते हैं तो वह नाम और प्रतिष्ठा की माया से नहीं बच पाते हैं । जहाँ अशिक्षित मानव स्त्री–पुत्र व धन की माया में उलझ जाता है वहीं शिक्षित मानव नाम और प्रतिष्ठा की माया में उलझ जाता है । इंसान की दैनिक जीवन की उपयोगी चीज़ो की जरूरतें जब पूरी हो जाती है अर्थात् जब वह धन–धान्य से पूर्ण हो जाता है तब उसे नाम और प्रतिष्ठा की कामना होती है, वह चाहता हे कि मेरे मरने बाद भी लोग मुझे जाने, अर्थात् मुझे याद रखें लोग मेरी ईज्जत और सम्मान करें । लोग मुझे विभिन्न सम्मानों से समानित करें । जहाँ तक मेरी जानकारी में दुनिया उसी को याद रखती है जो दुनिया के लिए कुछ करता है । अर्थात् देने वाले को ही लोग याद रखते हैं लेने वालों को नहीं, जिसनें देश को कुछ नहीं दिया सिर्फ देश से लिया ही उसे लोग याद नहीं रखते जिसने दूसरों को अमृत देकर स्वयं विष का पान किया है लोग उसी को याद रखते है, जिसने अपनी सुविधाओं को त्यागकर दूसरों की सुविधा का सदैव ख्याल रखा है, लोग उसे ही याद रखते है । मानव सभ्यता की इस पांच हजार वर्षो में इस दुनिया में लगभग अरबों और खरबों को संख्या में लोग पैदा हुए और मर गए, परन्तु इन अनगिनत संख्या में से गिनती की हजार संख्या ऐसी होगी जिसे लोग याद रख पायें हों । हम उनके नाम को इसलिए याद रख पाते कि क्योंकि उनका हमारे जीवन पर बहुत बड़ा उपकार होता है । अथवा उनका नाम मानव सभ्यता के इतिहास में वर्णित होता है । इन नामों में उन संत व महापुरूषों नाम होते हैं जिन्होंने मानव सभ्यता को पलवित व पुषप्ति किया है । या उन लेखकों व कवियों का नाम होते हैं जिन्होंने सत्य को जाना–समझा और जिया है । बहरहाल ये वो नाम हैं जिन्होंने नाम के लिए कभी कोई काम नहीं किया, बल्कि बिना किसी स्वार्थ का राग द्वेष, सुख–दुख व लाभ हानि से उपर उठकर काम किया, जिन्होंने कर्म को ही धर्म माना। उनका काम था सिर्फ काम करना, नाम की चाह किये बगैर काम करना, उनका कहना था कि नाम का क्या काम, वो सदैव सत्य की राह पर चलते रहे, नाम और प्रतिष्ठा को भी कोई चाह नहीं थी। उन्हें तो सिर्फ मानव को सभ्य–सुसंकृत और समृद्ध बनाना था ।

आज का मानव बगैर काम के नाम की चाह में जी रहा है। सबसे पहले वो अनैतिक तरीके से धन इक्ट्ठा करता है। फिर वह सत्ता व सिंहासन पर बैठता है, जब सता का सुख भोग लेता है तब वह अपने नाम को जीवित रखने लिए केवल अपनी तस्वीर को सूचना व प्रचार के माध्यम से जन–जन तक पहुंचाने का काम करती है इसके लिए वह करोड़ों और अरबों रूपये खर्च कर देता यानी की

नाम के लिए वह अच्छा काम नहीं करके पैसों के बल पर अपने नाम को जीवित रखना चाहता है – वह जनता के दिल में बसे या न बसे परन्तु वह जनता के दिमाग में अवश्य बसा रहना चाहता है, तभी तो वह धन के माध्यम से सदैव मीडिया में बना रहना चाहता है । राम, कृष्ण, बुद्ध, महावीर, नानक, गाँधी कबीर सूर–तुलसी, मीरा ने अपने जीवन में बिना सूचना व प्रचार के ही अपने कर्म के बल पर ऐसा नाम किया जिसे यह दुनिया लाखों लाखों वर्षों तक नहीं भूल सकती, परन्तु जो लोग धन के माध्यम से

अपना नाम स्थापित करना चाहते हैं उन्हें दुनिया कभी याद नहीं रख पाती है । वो समय के साथ बीत जाते हैं। जिस तरह समय के साथ भौतिक पदार्थ नष्ट हो जाता है ठीक उसी तरह उनका नाम भी नष्ट हो जाता है। उनके जीते जी ही लोग उन्हें भूल जाते हैं, न तो लोग पैसे वालों को याद रखते है और न ही लोग राजा–महाराजाओं को याद रखते हैं अगर किसी को याद रखा है, तो वो है, संत और महापुरूष संत और महापुरूषों का जीवन परमार्थ के लिए ही होता है, वो इस दुनिया में दूसरों के कल्याण हेतु ही जन्म लेते हैं । अतः लोग उन्हें स्वतः ही बिना प्रयास के दिल में बसा लेते हैं । जो लोग अपने जीते जी अपनी मूर्तियाँ बनवा लेते है, जो लोग आप जनता के टैक्स का दुरूपयोग कर अपना नाम शिलपट्टों पर अंकित करवाते हैं, जो लोग जन कल्याण योजनाओं का नाम अपने पूर्वजों के नाम पर रखते हैं उन्हें शायद यह ज्ञान नहीं है कि जबरदस्ती जनता को अपने पूर्वजों का नाम नहीं याद करवा सकते, जनता के दिलों में बसने के लिए त्याग की जरूरत होती हैं कुछ लोग मंदिरों में दान इसलिए करते हैं ताकि उनका नाम मंदिर के शिलाओं पर अंकित हो । कुछ लोग गिनीज बुक में नाम दर्ज करवाने के लिए अजीबों–गरीब हरकत करते हैं । क्योंकि उन्हें काम से नहीं नाम से मतलब होता है ।

महर्षि दयानन्द उवाच

बच्चा शारीरिक, मानसिक तथा आत्मिक किसी भी दृष्टि से न पूर्ण होता है और न शुद्ध। उसकी अपूर्णता और अशुद्धि को दूर करके उसे पूर्ण और शुद्ध बनाने की प्रक्रिया का नाम संस्कार है। संस्कार विधि इस नितित्त तैयार की गई शतवार्षिकी योजना है–

''जिस करके शरीर और आत्मा सुसंस्कृत होने से धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष प्राप्त हो सकते हैं और सन्तान अत्यन्त योग्य होते हैं, इसलिए संस्कारों का करना सब मनुष्यों को उचित है।''

योगमय जीवन

श्रीमती प्रेमचन्द्रिका,
सह सम्पादिका
साहित्यरत्न, आईटीआई 'शिल्पकला'

महर्षि पतञ्जलि ने योग दर्शन में जीवन को योगमय बनाने के सूत्र लिखे हैं। मानव का यह परम कर्त्तव्य है कि वह जीवन को योगमय बनाकर अलौकिक आनन्द को प्राप्त करें। व्यक्ति योग के आठ अंगों का सतत अभ्यास करने से वह हठभूमि को प्राप्त हो जाता है और इनका लगातार अभ्यास करने से उसके सम्पूर्ण शारीरिक विकार दूर हो जाते हैं तथा ज्ञान का हृदय में उज्ज्वल प्रकाश हो जाता है तथा वह उत्तरोत्तर बढ़ता ही रहता है जब तक मानव ईश्वर, जीव तथा प्रकृति के विभिन्न तत्वों को नहीं समझ लेता है सूत्र भूल रूप में योग दर्शन के साधन पाद में लिखा है "योगांगनुष्टानाद शुद्धिक्षये ज्ञान दीप्तिर्राविवेक ख्याते:" । इस प्रकार योग के आठ अंगों को भी साधक को जानना आवश्यक है :– जो इस प्रकार है – यम, नियमासन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यानसमाथदोदुष्टा वंगानि। ये आठ अंग जीवन को योगमय बनाने की विधियाँ हैं।

जो मनुष्य अपने लगातार दीर्घकालिक अभ्यास से इन अष्टांग योग का नित्य ही अभ्यास करता है वही योगी बन सकता है पहला अंग यम पाँच प्रकार का है – अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य अपरिग्रहायमाः। इनमें ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह के पालन से मानव उच्चकोटि को प्राप्त होता है। अहिंसा को तो परमोधर्म कहा गया है। मनुष्य किसी तरह से भी अन्य की हिंसा न करें और अहिंसक बना रहे। सदैव सत्य बोले और किसी वस्तु को मालिक की बिना अनुमति के न लेवें यही अस्तेय है। अतः पाँचों यमों को पालना आवश्यक है। अन्यथा वह मनुष्य मौत के मुँह में अपने को सदैव समझे।

इसी प्रकार नियम भी पाँच है। शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वर प्राणधान। इनमें पहला शौच है। शौच अर्थात सफाई इसमें बाहरी स्वच्छता, स्व की वस्त्रों एवम् बाहरी अंगों की स्वच्छता आती है। भीतरी शारीरिक स्वच्छता में अपने भीतरी अंगों को स्वच्छ करना आता है। लगातार मनुष्य स्वच्छता करता है। फिर भी शरीर में मैल रह ही जाता है। अतः शौच का पालन करने से मानव–जीवन योगमय बनेगा न कि बलात्कारी और दुराचारी बनेगा। क्योंकि इस वासनामय गन्ध के रहते योगी परै रस संर्ग दूसरे के शरीर के संसर्ग में नहीं आयेगा। अतः इन सभी यम, नियमों के भेदों का दृढ़संकल्प से पालन करना ही मानव का परम कर्त्तव्य है।

हम देखते हैं कि इन आठों अंगों के अनुष्ठान करने से मानव असंप्रज्ञात समादि को प्राप्त कर सकेगा।

योग में साधक को चाहिए के योग में न जाने देने वाले विघ्नों को व अन्तरापो को क्लेशों की भी जानकारी सम्यक्तया कर लेनी चाहिए इनमें प्रथम पाँच क्लेश है जो हमें योग में नहीं जुड़ने देते

हैं। अविद्य, स्मिता, राग, द्वेष अमिनिवेश इन पाँचों क्लेशों की अविद्या ही मूल है अतः विद्या ईश्वरीय ज्ञान, वेद, विद्या का संकल्प पूर्वक स्वाध्याय करना चाहिए। इन पाँचों क्लेशों के अतिरिक्त नौ अन्तरापों विक्षेपों योग के शत्रुओं को भी जानें वे ये हैं व्याधि, स्त्यान, सं ाय, प्रमाद, आलस्य, अविरति, भ्रान्तिदर्शन, अलब्ध भूमिकत्व व अनस्थित्व। ये नौ चित्त के विक्षेप है और अन्तराप भी कहे जाते है। इनके साथ ही साथ इनके सहयोगी पाँच सहविक्षेपों की भी जानकारी प्राप्त कर लेनी चाहिए। ये पाँच हैं – दुख, दौर्मनस्य, अंगमेजयत्व, श्वास, प्रश्वास। इस प्रकार योग में अभ्यास करने वाले साधकों को इन पाँच क्लेशों व नौ अन्तरापों (शत्रुओं तथा पाँच इनके सहयोगी विघ्नों को समझकर ही योग में अभ्यास करें। इन सभी क्ले ाों और अन्तरासों पर काबू करके ही मानव अपने जीवन को योगमय बना कर ही आलौकिक आनन्द अनुभूति कर सकता है।

क्षमाशीलता

—कृष्णा गर्ग, बरेली

अपकार का बदला अपकार से लेना आसुरी वृति है, उपकार का बदला उपकार से देना मानुषी वृति है और अपकार का बदला उपकार से देना ही सच्चा देवत्त्व है।

दो अक्षर का शब्द क्षमा बोलने में बड़ा सरल हैं, पर क्षमा की साधना बहुत कठिन है।

क्षमा पृथ्वी को भी कहते है। जैसे पृथ्वी अपने ऊपर आये हुये गोबर, तिनकों आदि को धीरे–धीरे अपने में समाहित कर लेती है, ठीक वैसे ही अपने ऊपर आई हुई विपरीत परिस्थितियों को हजम कर जाना तथा दूसरों के द्वारा पहुँचाये हुये क्षोभ या कष्टों को चित्त में जरा भी दण्ड की अभिलाषा रक्खे बिना सह लेना ही क्षमा कहलाता है।

क्षमा की साधना में अनेकों सदगुणों की साधना हो जाती है, ठीक ऐसे ही जैसे अहिंसा की साधना में अन्य सब यमों की साधना हो जाती है। क्षमा को वही कर सकता है, जिसमें दुर्वचनों की सुनने सहने की तथा दुर्व्यवहारों को बर्दाश्त करने की सहन शक्ति हो। तनाव और आवेश के समय स्वयं पर नियन्त्रण कर पाने की क्षमता को तथा जो हानि और क्षोभ पैदा हुआ हो उसको सहने में समर्थ हो।

'क्षमा' एक दीर्घकालिक तपस्या है। जब तक क्षमा को हम अपने जीवन की शैली ही न बना लें तब तक दूसरों के दुव्यवारों से उत्पन्न खेद और पीड़ा के सहने की शक्ति हम अपने में विकसित नहीं कर सकते। जब किसी व्यक्ति में यह क्षमता विकसित हो जाये तभी वह क्षमाशील कहलाने का अधिकारी बन सकता है।

क्षमा मानव के प्रशान्त बनाती है। सहनशील बनाती है और अपनी अनन्त शक्ति को पहचानने का सन्देश देती है। अपराधी को अपराध से शक्तिहीन करना दुर्जन मनुष्यों का कार्य है। अपराधी से यदि सम्पूर्ण बदला लेना है तो क्षमा ही सर्वश्रेष्ठ उपाय है। क्षमा सम्पूर्ण कार्यो के सिद्ध करने वाला वह वशीकरण मंत्र है जो विरोधियों को भी वश में कर लेता है। क्षमा यह शस्त्र है जो अपराधी के हृदय के घायल कर देता है, क्रूर से क्रूर व्यक्ति भी क्षमा–शस्त्र से परास्त हो जाता है जिसके हाथ में क्षमा रूपी अजेय अस्त्र है, दुर्जन उसको क्या हानि करेगा? क्षमा से दूसरों का पत्थर हृदय भी पिघल जाता है, और सबसे बडी बात है कि क्षमा करने वाला सदा प्रसन्न रहता है। अपकार का बदला अपकार से लेना आसुरी वृत्ति है। उपकार का बदला उपकार से देना मानुषीवृत्ति है और अपकार का बदला उपकार से देना ही सच्चा देवत्व हैं।

ऋषि दयानन्द, महात्मा गांधी, संतविनोबा आदि महापुरुषों का जीवन भी क्षमा का ही पाठ पढ़ाता है। महात्मा ईसा के जब सूली दी जा रही थी तो इन्होंने ईश्वर से यही प्रार्थना की थी कि हे परमपिता इन्हें क्षमा कर देना क्योंकि ये नहीं जानते कि ये क्या कर रहे हैं।

जब मनुष्य दूसरों से बैर लेने की वृत्ति को नष्ट करता है तो उसकी आत्मा पहले से और अधिक बलवान हो जाती है। क्षमा से आत्म बल मनोबल और बुद्धिबल भी बढ़ता है। क्षमाशील सबका आदर

प्राप्त करता है।

एक अन्तिम बात और– क्षमा कायरों का नहीं वीरों का भूषण है। जो कायर है क्षमाशील नहीं हो सकता। जो व्यक्ति क्रोध का प्रसंग उपस्थित होने पर भी क्रोध न करें, कठिनाइयों में चट्टान की तरह उनका मुकाबला करें उम मानव की क्षमा ही वास्तव में क्षमा है।

क्षमा वीरस्य भूषणम्

कवि रामधारी सिंह दिनकर कहते हैं–

क्षमा शोभती इस भुजंग को,
जिसके पास गरल हो।
उसको क्या जो दन्तहीन विष-रहित,
विनीत सरल हो।।

वास्तविक्ता

सुभाषचंद्र शर्मा

टीस नहीं देती क्या तुमका, आज के नेता की तस्वीर।
खल, दुर्जन संसद में पहुँचे, लिखने भारत की तकदीर।।

सभ्याचार का नाम नहीं, शब्दों की गोली चला रहे।
सत्य, अहिंसा और धर्म की, मिलकर होली जला रहे।।

कुर्सी, चप्पल, मुक्के, घूंसे, संसद की पहचान हुए।
गांधी, नेहरू की शैली से, ये नेता अनजान हुए।।

इन दुष्टों ने अच्छे नेताओं को पीछे छोड़ दिया।
सहज बह रही अविरल धारा का रस्ता ही मोड़ दिया।

आज़ादी के वक्त के नेताओं की याद जब आती है।
देखें आज के नेता तो, सचमुच फट जाती छाती है।।

खून खौल जाता है, जब कोई नेता–नेता करता है।
इनकी करतूतों से जन–जन, पल–पल, छिन–छिन मरता है।।

इनका बस चल जाए तो, ये सांस पे टैक्स लगा देंगे।
खुद जमीन पर पसरेंगे, जनता को स्वर्ग पहुँचा देंगे।।

जनहित का कानून बनाने में दशकों लग जाते हैं।
अपने मतलब के मुद्दे, पलभर में पास करवाते हैं।

बुद्धिजीवी, कुशलजनों की, अपने देश में कमी नहीं।
देश का ही दुर्भाग्य है, उनकी राजनीति में जमीं नहीं।।

पामर नेताओं ने जब से, मैली नज़र दिखाई है।
देश की जनता जाग उठी है, शेरों ने ली अंगड़ाई है।।

अब दहाड़ का वक्त आ गया, पंजा खूब चलाएंगे।
वोट की पैनी धार से, इन दुष्टों को मार गिरायेंगे।

चाणक्यनीति

१. **निर्विषणाऽपि सर्पेण कर्तव्या महती फणा।**
विषमस्तु न चाप्यसतु घटाटोपो भयंकरः।।

विषहीन सांप को भी अपना फन फैलाकर रखना चाहिए, उसमें विष होने या न होने को कोई नहीं जानता, पर उसके इस आडम्बर से लोग भयभीत हो सकते हैं।

२. **प्रातर्द्यूतप्रसगेन मध्याहने स्त्री प्रसंगतः।**
रात्रौ चौर्यप्रसंगेन कालो गच्छत्यधीमताम्।

मूर्ख व्यक्ति प्रातःकाल का समय जुआ खेलने में, दोपहर का समय स्त्री प्रसंग में और रात्रि का समय चोरी में व्यतीत करते हैं।

चाणक्य कहते हैं मूर्ख व्यक्ति अपने समय को व्यर्थ के कार्यों में नष्ट करते हैं जबकि विद्वान अपने समय का उपयोग अच्छे कार्य में करते हैं।

३. **सर्वौषधीनाममृता प्रधाना सर्वेषु सौख्येष्वशन प्रधानम्।**
सर्वन्द्रियाणां नयनं प्रधान सर्वेषु गात्रेषु शिरः प्रधानाम्।।

सभी औषधियों में अमृता (गिलोय) सबसे प्रमुख है, सुख देने वाले पदार्थों में भोजन सबसे प्रमुख है, मनुष्य की इन्द्रियों में आंखें सबसे प्रमुख हैं तथा शरीर के सभी अंगों में मनुष्य का सिर अर्थात् बुद्धि सर्वश्रेष्ठ है।

४. **विद्यार्थी सेवकः पान्थः क्षुधाऽऽर्तो भयकातरः।**
भाण्डारी प्रतिहारी च सप्त सुप्तान् प्रबोधयेत्।।

विद्यार्थी, सेवक, पथिक, भूख से पीड़ित, डरा हुआ व्यक्ति, भंडारी और द्वारपाल यदि अपने काम के दौरान सो रहे हों तो इन्हें जगा देना चाहिए।

चाणक्य कहते हैं कि उपर्युक्त सातों व्यक्तियों को कार्य के दौरान सोते समय जगाना हितकर होता है।

५. **अहि नृपं च शार्दुल किटि च बालक तथा।**
परश्वानं च मूर्खं च सप्त सुप्तान् न बोधयेत्।।

सांप, राजा, शेर, सुअर, बालक, दूसरे के कुत्तों और मूर्ख व्यक्ति को सोते से नहीं जगाना चाहिए।

पूर्वोक्त श्लोक के विपरीत इस श्लोक में चाणक्य ने कुछ लोगों को सुप्तावस्था से जगाने का निषेध किया है।

६. **दृष्टिपूत्र न्यसेत् पादं वस्त्रपूतं पिबेज्जलम्।**
शास्त्रपूतं वदेद् वाक्यं मनः पूतं समाचरेत।।

अच्छी तरह से आंख से देखकर आगे कदम बढ़ाना चाहिए, कपड़े से छानकर जल पीना चाहिए, शास्त्रों के अनुसार ही कोई बात कहनी चाहिए और कोई भी कार्य अच्छी तरह सोच–समझकर ही करना चाहिए।

इस श्लोक में चाणक्य ने मनुष्य को अपने प्रत्येक कार्य को पूरी एकाग्रता और ध्यान से करने के लिए कहा है।

७. **सुखार्थी वा त्यजेद्विद्यां विद्यार्थी वा त्यजेत् सुखम्।**
सुखार्थिनः कुतो विद्या विद्यार्थिनः कुतो सुखम्।।

यदि सुख की इच्छा हो तो विद्या अध्ययन छोड़ देना चाहिए और यदि विद्यार्थी विद्या सीखने की इच्छा रखता है तो उसे सुख का त्याग कर देना चाहिए, क्योंकि सुख चाहने वाला विद्या प्राप्त नहीं कर सकता और जो विद्या प्राप्त करना चाहता है, उसे सुख नहीं मिल सकता।

८. **दरिद्रता धीरतया विराजते कुवस्त्रता शुभ्रतया विराजते।**
कदन्नता चोष्णतया विराजते कुरूपता शीलतया विराजते।

दरिद्रता के समय धैर्य धारण करना, गंदे वस्त्र को साफ रखना अच्छा होता है। इसी प्रकार सामान्य भोजन को भी ताजा और गर्म–गर्म खाया जाए तो अच्छा लगता है। सुशीलता के कारण कुरूपता भी बुरी नहीं लगती।

६. **आत्मद्वेषत् भवेन्मृत्युः परद्वेषात् धनक्षयः।**
राजद्वेषात् भवन्नाशो ब्रह्मद्वेषात् कुलक्षयः।।

अपनी ही आत्मा से द्वेष रखने वाले की मृत्यु हो जाती है। दूसरों से द्वेष रखने वाले का धन नष्ट होता है। राजा से द्वेष रखने वाला मनुष्य अपना नाश करता है, लेकिन ज्ञानी पुरूष व मुरूजनों से द्वेष रखने से कुल का ही नाश हो जाता है।

इस श्लोक में बताया गया है कि जो व्यक्ति अपने आपसे द्वेष रखता है वह नष्ट हो जाता है, इसी प्रकार विद्वानों और सिद्ध पुरूषों से द्वेष रखने वाला व्यक्ति भी नष्ट हो जाता है।

सम्पादक
प्राचार्य महावीर शास्त्री

गृहस्थ के सूत्रधार

स्वामी दीक्षानन्द सरस्वती

पति और पत्नी एक ही तन्त्र के ताने–बाने हैं। पति ताना है तो पत्नी बाना है। इसी ताने–बाने से निर्मित देह तन्त्र को पहनकर ही कोई आत्मा पुत्र–संज्ञा का लाभ करती है। यह कहना कठिन है कि ताने–बाने में किसका महत्त्व अधिक है। यही कहा जा सकता है कि दोनों एक–दूसरे के पूरक हैं, एक–दूसरे के आश्रित हैं। **बाना अपने को ताने में विलीन करता** है, तब कहीं तन्त्र पहनने, ओढ़ने और बिछाने के काम आता है; पत्नी अपने स्वत्व को पति में विलीन कर दे, यही उसका सौभाग्य है। उसका अपने स्वत्व को पृथक बचाकर रखना अपराध है। वह अपने अर्थ, काम और धर्म–तन्त्र को पति के अर्थ, काम और धर्म–तन्त्र में विलीन कर दे, यही उसकी **अव्यभिचारिणी स्थिति** है। सम्भवतः एक प्रकार से, भगवान मनु ने "न स्त्री स्वातन्त्र्यमर्हति" में इसी की घोषणा की है।

मैं द्यौः, तू पृथिवी - वेदों में स्त्री–पुरुष के सहमिलन की उपमा जिन तत्त्वों से दी गई है वह और भी अनुपम है, जो परम कवि का ही चमत्कार है। विवाह–संस्कार में इसकी घोषणा स्वयमेव वर ने अभी–अभी की थी। तुझे सम्बोधित करते हुए कहा था–"द्यौरहम् पृथिवी त्वम्" : मैं द्यु हूँ और तू पृथिवी है। जैसे ये दोनों एक–दूसरे के प्रति **आकर्षित और आबद्ध** हैं, वैसे ही हम दोनों एक–दूसरे के प्रति आकर्षित और आबद्ध रहेंगे। मण्डप के नीचे बैठकर बांधी गई दो पल्लुओं की गाँठ केवल कपड़े की गाँठ[1] नहीं है, वह तो दो हृदयों का ग्रन्थि–बन्धन है जो सूर्य और पृथिवी के गठ–बन्धन की भाँति दृढ़ रहेगा।

पुत्र चन्द्र है - जैसे पृथिवी सूर्य को केन्द्र बनाकर उसकी परिक्रमा करती है, वैसे ही पत्नी पति को केन्द्र मानकर उसी की परिक्रमा करती रहे। जिस प्रकार सूर्य के प्रकाश से पृथिवी आलोकित रहती है, उसी प्रकार पत्नी पति के **व्रत से आलोकित रहे** और उसे पुत्र में संक्रान्त करे–**पति सूर्य है, पत्नी पृथिवी है, पुत्र चन्द्र है**। जहाँ सूर्य चन्द्र पर सीधा प्रकाश डालता है, वहाँ पृथिवी के माध्यम से भी प्रकाश डालता है। जहाँ सीधा आया हुआ प्रकाश आग्नेय होता है, वहाँ **पृथिवी के माध्यम से आया हुआ प्रकाश** सौम्य होता है। पुत्र वह है जिसमें पिता और माता के, दोनों के, गुण संक्रान्त हों। सत्य व्यवहार ही वह गुण है जो पति–पत्नी को परस्पर आकर्षित और आबद्ध रखता है, वर द्वारा कही गई इस उक्ति में इसी का निर्देश मिलता है–"बध्नामि सत्यग्रन्थिना मनश्च हृदयञ्चते", मन्त्र ब्राह्मण १।३।८।।

सीप के दो पुट - सीप के दो पुट सहयुक्त होकर ही मोती का निर्माण करते हैं। पति–पत्नी भी गृहस्थ–सीप के दो पुट हैं जिनमें तनय **मौक्तिक का लाभ** किया जाता है। अलग हुई सीप–पुट मोती नहीं बना सकती; इसलिए वह स्थिति कभी भी श्रेयस्कर नहीं जिसमें परस्पर वियुक्त होने की नौबत आये। वेद का आदेश है–"मा वियौष्ट", वियुक्त मत होवो।

१. जहाँ गाँठ तहँ रस नहीं, यह जानत सब कोय।
मंडए तरु की गाँठ में, गाँठ-गाँठ रस होय।।   -बिहारी

दो चक्र - रथ को गति देने के लिए **दो चक्रों** की आवश्यकता है। एक चक्र पर रथ न ठहर ही

सकता है और न गति ही दे सकता है। गृहस्थ–रथ का एक चक्र यदि पति है तो दूसरा चक्र पत्नी है। इसी से पत्नी की स्थिति का अनुमान किया जा सकता है।

दो पंख - जैसे पक्षी दो पंखों के आश्रित ऊँची–से–ऊँची उड़ान भरता है, वैसे ही गृहस्थ–रूपी पक्षी भी पति–पत्नी–रूपी पंखों के आश्रित स्वर्लोक तक की उड़ान भरता है। गृहस्थ पक्षी का यदि एक पक्ष पति है तो दूसरा पक्ष पत्नी है।

विवाह–वेदी से पति ने अभी–अभी यह घोषणा करके अपने और तेरे **हृदय की अभिन्नता की उपमा उन दो जलों से दी है** जो भिन्न स्रोतों से लाकर एक पात्र में इकट्ठे कर दिये गये हैं। जैसे उनको पृथक् करना असम्भव है, वैसे ही दो भिन्न–भिन्न कुलों से आए व्यक्तियों के हृदयों का पृथक् किया जाना असम्भव है ''समापो हृदयानि नौ'' (१० ।८५ ।४७)

नीरक्षीर - नीरक्षीरवत् एकजान होने की बात भी इसी को लक्ष्य में रखकर कही गई है। नीर अपने स्वत्व को क्षीर में विलीन करके ही क्षीर के मूल्य बिकता है। पत्नी अपने स्वत्व को पति में विलीन करके ही अपना मूल्य बढ़ा सकती है।

शब्द अर्थ - कविकुलगुरु कालिदास ने पति–पत्नी के अखण्ड सम्बन्ध की उपमा सर्वथा नये प्रकार से दी है : जैसे संज्ञा और अर्थ का अटूट सम्बन्ध है, वैसे ही पति और पत्नी का अटूट सम्बन्ध है–पति संज्ञा है, तो पत्नी अर्थ है।

''**वागर्थाविव** सम्पृक्तौ'' रघुवंश सर्ग १, श्लोक १ : जैसे संज्ञा और अर्थ को एक–दूसरे से पृथक् नहीं किया जा सकता, वैसे ही पति–पत्नी को एक–दूसरे से पृथक् नहीं किया जा सकता।

अथर्ववेद में इन्द्र से कहा गया है कि वह पति–पत्नी को चकवा–चकवी की भाँति दाम्पत्य प्रेम में आबद्ध रखे।

वेदों में **स्त्री को जीवन-रस का अक्षय स्रोत** कहा गया है। उसकी महिमा किस प्रकार कही जाय । अभी–अभी विवाह–संस्कार में इस प्रकार के ओजस्वी स्वर सुने गये थे : ''यस्यां भूतंसमभवत् यस्यां विश्वमिदं जगत, तामद्य गाथां गास्यामि स्त्रीणां यदुत्तमं यशः।।'' पार० गृह्य० १ ।७ ।२ ।।

यह सत्य ही है कि **भूत और भविष्यत्** जगत् के जन्म का कारण स्त्री है। उसके उत्तम यश की आराधना भारतीय संस्कृति में होनी ही चाहिए। हमारे उज्ज्वल भूत की जो जन्मदात्री रही है, जिसकी कुक्षि मनु, वशिष्ठ, विश्वामित्र, याज्ञवल्क्य, दिलीप, भगीरथ, रघु और राम आदि ऋषियों और नृपों को प्रसूत करती रही है, जिसमें हमारा उज्ज्वल भविष्य निहित है, आज भी जिसने दयानन्द, गांधी को जन्म दिया है, उस स्त्री–शक्ति की यशोगाथा गाता हूँ।

सप्तपदी - प्राचीनों में पद्धति थी कि किसी को मित्र बनाना होता था तो उसे कहा जाता था कि **आओ, सात कदम साथ चल लें**। सात कदम चल लिये कि मित्र बन गये और वह मित्रता आमरण अटूट रहती थी। उन सात पगों का क्या अभिप्राय था, कह नहीं सकते। यहाँ तो स्पष्ट ही एक–एक पग किस उद्देश्य उठाना है इसकी घोषणा की गई है। हर चरण सखाभाव को स्थिर करने के लिए है। पहले छः चरणों में से किसी एक का अभाव भी सखाभाव में कमी ला सकता है।

वर ने सबसे पहला चरण अन्न की प्राप्ति के लिए उठाया है। गृहस्थ में परस्पर स्नेह को अक्षुण्ण रखने के लिए अन्न की प्राथमिकता है। उसी स्नेह अथवा मैत्री के स्थायित्व के लिए बल की आवश्यकता है, अतः दूसरा चरण परस्पर बल की वृद्धि और रक्षण के लिए उठाया जाता है। जहाँ 'इषे एकपदी भव' कहकर पहला चरण उठवाया जाता है, वहाँ 'ऊर्ज्जे द्विपदी भव' कहकर दूसरा चरण उठवाया जाता है। पति–पत्नी के सखीत्व में ये दोनों मूलाधार हैं–इष और ऊर्ज्ज, अन्न और बल। इष और ऊर्ज का अर्थ जहाँ अन्न और बल है वहाँ **इच्छा-शक्ति और उत्साह-शक्ति भी** है। कदाचित् घर में अन्न और शारीरिक बल का अभाव भी हो, परन्तु इच्छा–शक्ति और उत्साह–शक्ति तो बनी ही रहनी चाहिए, क्योंकि स्थूल शक्ति की अपेक्षा सूक्ष्म शक्ति का अधिक महत्त्व है। यह सब–कुछ होकर भी यदि तीसरा चरण नहीं उठा तो भी मैत्री स्थिर न रह पायेगी। इसलिए वर कहता है कि आओ, तीसरा चरण आय–व्यय को सन्तुलित रखने के लिए उठाएँ–''रायस्पोषाय त्रिपदी भव।'' धन को बचाने की भी कुशलता होनी चाहिए। जहाँ आपकी उपलब्धि के नये–नये स्रोत खुलें वहाँ व्यय के हीन स्रोतों को बन्द कर दें, अन्यथा वह व्यय न होकर अपव्यय कहलाएगा। फिर हम राय का पोषण न कर सकेंगे। इसलिए आओ, व्यय की मात्रा को आय से बढ़ने न दें। **'तेते पाँव पसारिए जेती लांबी सौर।'**

'रास्पोषाय त्रिपदी भव' में जहाँ उक्त भाव निहित है, वहाँ एक भाव यह भी है कि हम ऐसे धन के स्वामी हों जो पोषक हो, शोषक न हो – **''रायस्पोषाय न तु राश्शोषाय''**। ऐसा धन नहीं चाहिए जो किसी के शोषण से प्राप्त हुआ हो अथवा हमारा ही शोषण करनेवाला हो। पोषक धन के स्वामी होकर ही हम सच्चे सुख का उपभोग कर सकते हैं। तब कहीं कहा जाएगा ''मायोभव्याय चतुष्पदी भव।'' अब आओ, चौथा चरण उठाएँ।

इन चार चरणों के उठने पर भी यदि पञ्चम चरण न उठाया गया तो परस्पर मैत्री में बाधा उपस्थित होगी, कटुता बढ़ेगी, जीवन नीरस और दूभर हो जायेगा। यह आवश्यक चरण है। इसीलिए वर ने उसकी ओर निर्देश करते हुए कहा जन प्रज्ञ प्रयत्त उद्धना (धर्म) 'पञ्चपदी भव।' आओ, उत्कृष्ट सन्तति के लिए पाँचवाँ चरण बढ़ाएँ। घर में अन्न हो, शरीर में बल हो, बैंक में धन हो, परिवार में ऐश्वर्य हो, परन्तु गोदी में सन्तान न हो तो सब नीरस हैं।

सन्तान के लिए बड़े–बड़े राजाओं– महाराजाओं को विह्वल पाया गया है। संसार की अनेकों वस्तुओं में सुख देखा जाता है परन्तु जो सुख पुत्रप्राप्ति में है वह अन्यत्र दुर्लभ है। **दम्पत्ति के अतःकरण को मिलानेवाली यदि आनन्द-ग्रन्थि है** तो पुत्र ही है। महाकवि भवभूति ने इसका वर्णन कितना सात्त्विक किया है–''अन्तःकरणतत्त्वस्य दम्पत्योः स्नेह–संश्रयात्। आनन्दग्रन्थिरेकोऽपत्यमिति बध्यते।'' उत्तररामचरित, ३।१७

इस पुत्रप्राप्तिरूप पंचम चरण के लिए आवश्यक सावधानी की आवश्यकता है, जिसकी सूचना छठे चरण में दी गई है कि आओ, मर्यादित जीवन विताएँ। हर बात में नाप–तोल हो। अन्न, धन, बल, सुख और सुतलाभ में विशेषतया जिस चरण की आवश्यकता है उसका नाम है ऋतु–अनुकूल आचरण। इसलिए कहा गया है कि **''ऋतुभ्यः षट्पदी भव।।''** यदि इन कदमों में दृढ़ता होगी तब कहीं हम दोनों सखा–भाव को स्थायित्व दे सकेंगे और तब मेरे साथ सातवाँ चरण उठाना। मै। कहूँगा ''सखो सप्तपदी भव।'' सखाभाव के लिए सातवाँ चरण उठाओ।

भारत के महान वैज्ञानिक

१. **भारद्वाज** - वैदिक ऋषि जिन्होंने सर्वप्रथम विमान विद्या विषयक ग्रन्थ का निर्माण किया। वह एक प्रसिद्ध आयुर्वेदाचार्य भी थे

२. **कपिल** - सांख्य दर्शन के प्रवर्तक मुनि, जिनके अनुसार चेतन पुरुष और तीन गुणों से युक्त ही सृष्टि के मूल कारण हैं।

३. **कणाद**- वैशेषिक दर्शन के प्रवर्तक ऋषि, जिनका परमाणु प्रसिद्ध है।

४. **सुश्रुत** - शल्य चिकित्सा के जनक । उन्होंने त्वाचारोपण (पलास्टिक सर्जरी) और भोतियाबिंद की शल्य क्रिया का भी विकास किया

५. **चरक** – काय चिकित्सा के मूल ग्रंथ चरक संहिता के रचयिता, जिसका विश्व की अनेक भाषाओं में अनुवाद हुआ है।

६. **भास्कराचार्य द्वितीय** – उन्होंने न्यूटन सै ५०० वर्ष पूर्व पृथ्वी में गुरुत्वाकर्षण शक्ति को परिकल्पना की थी। है 'सिद्धान्त शिरोमणि' 'लीलावती, 'बीज गणित' आदि उनके प्रसिद्ध ग्रन्थ हैं।

७. **वराह मिहिर**- 'सम्राट विक्रमादित्य के राज ज्योतिषी और उनके नवरत्नों में से एक वराह मिहिर महान् ज्योतिषाचार्य थे। उनका ''बृहत्संहिता'' नामक ग्रन्थ बहुत प्रसिद्ध है।

८. **नागार्जुन**- प्रसिद्ध रसायनशास्त्री और आयुर्वेदाचार्य प्रसिद्ध विद्वान् प्रो. पी. सी. राय ने अपने महान् ग्रन्थ 'दि हिन्दू कैमिस्ट्री' में उनकी भूरि–भूरि प्रशंसा की है।

६. **आर्यभट्‌ट प्रथम** - ५वीं शती के महान गणितज्ञ और ज्योतिषाचार्य जिनका ग्रन्थ 'आर्यभट्टीयम् लोकप्रसिद्ध है। 'पृथ्वी सूर्य को परिक्रमा करती है।' इस सिद्धान्त का विश्व में सर्वप्रथम उन्होंने ही प्रतिपादन किया था।

१०. **पतंजलि** - 'योग सूत्र' के रचयिता। विश्व को योग का महान् योगदान आप ने दिया।

११. **ब्रह्मगुप्त**- 'ब्रहम स्फुट सिद्धान्त' के रचयिता, जो ज्योतिष और गणित का प्रामाणिक ग्रन्थ है। 'सूर्य सिद्धान्त के प्रतिपादक भी ब्रह्मगुप्त ही थे।

१२. **वाभटट्** - प्रसिद्ध आयुवेदचार्य, जिन्होंने 'अष्टाग हदय' नामक ग्रंथ की रचना की।

१३. **भावमिश्रा**- प्रसिद्ध आयुर्वेदाचार्य, 'भाव प्रकाश' नामक ग्रंथ के रचयिता।

१४. **शार्गधर** - प्रसिद्ध नाड़ी शास्त्र विशेषज्ञा 'शार्गधर संहिता' के रचयिता।

१५. **जगदीश चन्द्र बोस** - वनस्पतियों की सजीवता के सिद्धकार्ता तथा मार्कोनी से पूर्व ही 'बिना तार' के आविष्कर्ता।

संकलनकर्ता

दीनानाथ बत्रा

अन्तर की चाह

ऐ, मेरे प्रभु! ऐसी लगन दे, निशि दिन, छिन–छिन तेरे ही गुण गाऊँ।
तू है सत्य स्वप, सत्यता मैं भी अपनाऊँ।
तू प्रकाश का पुंज, ज्योति धरती पर बिखराऊँ।
तूने देकर ज्ञान मनुज पर की है अनुकम्पा,
तू है दीन–बन्धु, दुःख दुखियों के मैं हर लाऊँ।।
उर में भगवन! ऐसी जलन मचा दे,

पर–पीड़ा में किंचित् चैन न पाऊँ।।१।।
नाम तुम्हारा छोड़ भला मैं और किसे ध्याऊँ।
जग में दूजा कौन जिसे मैं अपना कह पाऊँ।
तूने दिए महान दान मानव के पुतले को,
जिनका सहज बखान प्रभो! मैं कैसे कर पाऊँ।।
मुझमें हरदम के तड़पन उपजा दे,
स्वाति बूँद तू, मैं चातक बन जाऊँ।।२।।

भौतिकता में भूले नहीं मैं तुझको बिसराऊँ।
पा कुछ सुरभित फूल मूल को कभी न खो आऊँ।
मुझे न भाते हैं आकर्षण बन्दी जीवन के,
चाह यही है कारा से खुल तुझसे मिल जाऊँ।
'साधक– मन की प्रियतम! तपन मिटा दे,
चख लूं तेरा अमिय, तृप्त हो जाऊँ।।३।।

-प्रताप कुमार 'साधक'

कृष्णा महेश गायत्री संस्थान

पंजीकृत

कृष्णा महेश गायत्री संस्थान को दिया गया दान आयकर अधिनियम १९६१ की धारा ८० जी के अन्तर्गत आयकर मुक्त है। कृष्णा महेश गायत्री संस्थान द्वारा निर्माणाधीन भव्य यज्ञशाला, निःशुल्क विद्यार्थी शिक्षा व आयुर्वेदिक चिकित्सालय हेतु सहयोग राशि प्रदान करें। संस्थान हेतु सहयोग राशि नकद/चैक/ड्राफ्ट द्वारा कृष्णा महेश गायत्री संस्थान, डब्ल्यू २२ए–२, वेस्टर्न एवेन्यू, सैनिक फार्म, नई दिल्ली–११००६२ के नाम भेजी जा सकती है।

आया एक योगी

युग युग से भटके मानब को
राह दिखाने आया रोगी
अखिल विश्व को बन्धुत्व का
पाठ सिखाने आया योगी।।

कर्मयोग को भी बनाकर,
नर सेवा का भाव जगा कर
'उठो जागो' का शंख बजाकर
राष्ट्रदेव क्रो शीश झुका कर
निज गौरव को खोई पहचान
फिर आज बजाने आया योगी ।।

नयी सोच नया आधार,
जीवन ध्येय हो यर उपकार,
समरस समाज है सबल राष्ट्र
और सुखी हो सब संसार
युवा शक्ति में सदाचार की...
अलख जमाने आया योगी।।

इस ज्योतिर्मय पावन पथ –
आओ बढ़ चलें हम सब मिलकर
विश्व विजय करने को निकलें
भारत माता की जय कह कर
पुनः आर्दों की सुप्त शक्ति को
आज जगाने आया योगी।।

आर्य समाज सैनिक फार्म्स धर्मार्थ समिति (पंजीकृत)

पंजीकरण संख्या – 429/दक्षिण जिला/2011

कृष्णा महेश गायत्री संस्थान (पंजीकृत)

पंजीकरण संख्या – 5040/दिनांक 30-11-2007

आर्य समाज की स्थापना 31 मार्च 2011 में श्रीमती निर्मल नवीन रहेजा जी के सद्प्रयत्नों से हुई।

आर्य समाज के पदाधिकारी

1. प्रधान – श्री नवीन एम. रहेजा

2. कोषाध्यक्ष – श्रीमती इन्दू कौल

3. महामन्त्री – श्री प्राचार्य महावीर शास्त्री

हमारे इस संस्थान को F&27MOS/SSS/OBE/MOU- 2709113& 2013&889, जो भारत सरकार के अन्तर्गत एक स्वायत संगठन है, से मान्यता मिल गई है। जिसमें विभिन्न कक्षाओं में विभिन्न आयु वर्ग के छात्र पढ़ते है। स्कूल में खेल व सांस्कृतिक कार्यक्रम भी होते हैं जिनमें भाग लेना सभी छात्रों के लिए अनिवार्य है। सभी बच्चों को शिक्षा, यज्ञ, योग आदि की निःशुल्क शिक्षा मिलती है। पुस्तकें, वर्दी तथा भोजन की निःशुल्क व्यवस्था है। सर्दियों में कम्बल भी वितरित किये जाते हैं। लगभग एक सौ छात्र–छात्राएं नित्य ही समय पर स्कूल आते हैं, हवन–प्रार्थना के बाद नित्य ही वैदिक प्रवचन दिया जाता है।

प्राचार्य महावीर शास्त्री

प्रधानाचार्य

छात्र विवरण

नाम : अजय कुमार
आयु : १४ वर्ष
कक्षा : छः

अजय एक निम्न वर्ग के परिवार से सम्बन्ध रखता है। यह हमारे आश्रम के पास की बनी एक कच्ची बस्ती में रहता है। यह बचपन से ही हमारे आश्रम में बनी पाठशाला में पढ़ने आता है। इसके परिवार में माँ–बाप सहित परिवार में यह सात सदस्य हैं। यह बचपन में बहुत ही चंचल स्वभाव का था, परन्तु इसके माता–पिता की मेहनत और हमारे आश्रम के शिक्षकों के मार्गदर्शन के फलस्वरूप यह बच्चा आज कक्षा छः में पढ़ रहा है। आज यह बहुत ही मेहनती व होनहार है और अपने जीवन के लक्ष्य को पहचानता है। इसके व्यवहार में यह परिवर्तन इसके उज्ज्वल भविष्य को दर्शाता है। निम्नवर्ग में होने के बावजूद भी इसकी आकांक्षाएं बहुत बड़ी है और इस बच्चे के जीवन में कुछ बड़ा करने के इस दृढ़ निश्चय में हम (कृष्णा महेश गायत्री संस्थान) इसके साथ है और भविष्य में भी इस छात्र व इस जैसे अन्य छात्र–छात्राओं का मार्गदर्शन करते रहेंगे।

प्राचार्य महावीर शास्त्री
(कृष्णा महेश गायत्री संस्थान)

बच्चों का पन्ना

प्राचार्य महावीर शास्त्री

यहा प्रस्तुत यह कुछ चित्र हमारे आश्रम की पाठशाला में पढ़ने वाले छात्रों द्वारा बनाये गये हैं। ऐसे बहुत से चित्र, यह छात्र हर शनिवार को बनाते हैं, इस तरह से उन्हें अपने व्यस्त जीवन में जहाँ वो अपनी आर्थिक और सामाजिक समस्याओं से जूझ रहे हैं। अपने सपनों को रंगने का समय मिल जाता है। इस प्रकार वो सिखते भी हैं और पढ़ाई के साथ–साथ कला के प्रति उनकी रुचि भी बढ़ती है।

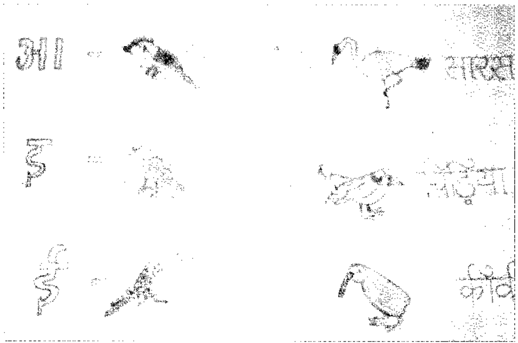

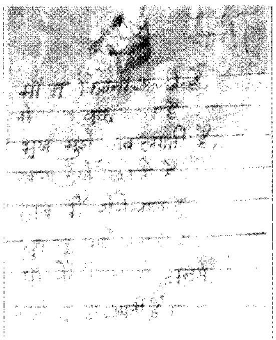

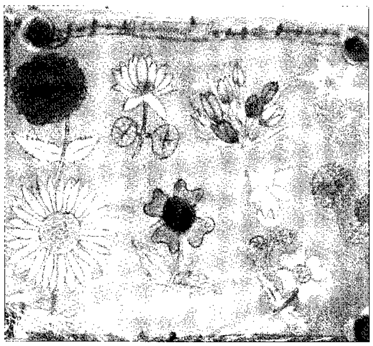

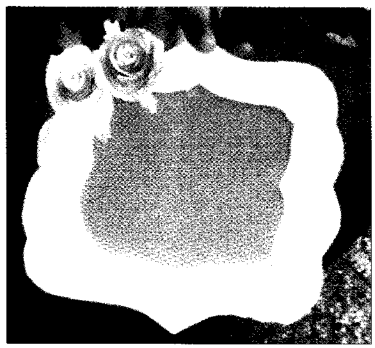

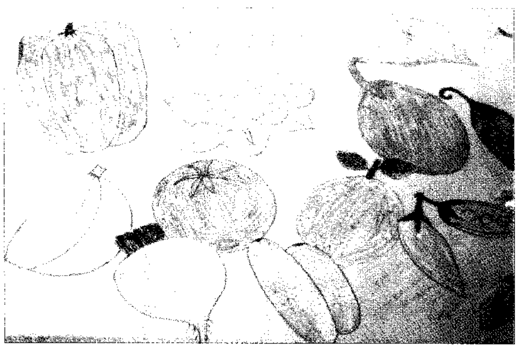

आर्य माँ कृष्णा रहेजा जी

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक व सम्पादक नवीन एम रहेजा द्वारा मयंक प्रिन्टर्स, 2199/63, नाईवाला, करोल बाग, नई दिल्ली–110005 से मुद्रित व डब्ल्यू 22 ए–2, वेस्टर्न एवेन्यू, सैनिक फार्म, नई दिल्ली–110062 से प्रकाशित।

(RNI No. DELHIN/2010/31333)